"Knowledge Scholar"
An International Peer Reviewed E-Journal Of Multidisciplinary Research
Volume: 12, Issue: 03, May – Jun. 2025 eISSN NO. 2394-5362
Impact Factor (SJIF) – 6.323

भारत में हरित क्रांति और पर्यावरणीय परिणाम

अतुल सिंह
शोधार्थी
इतिहास एवं पुरातत्व विभाग
डॉ. शकुंतला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

डॉ. मल्लिका सक्सेना
सह आचार्य
इतिहास एवं पुरातत्व विभाग
डॉ. शकुंतला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ, उत्तर प्रदेश

सार –

1960 के दशक में शुरू की गई हरित क्रांति ने उच्च उपज देने वाली किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक और आधुनिक सिंचाई तकनीकों को पेश करके भारत के कृषि परिदृश्य को बदल दिया। इस आंदोलन ने खाद्य उत्पादन को काफी बढ़ावा दिया, पुरानी खाद्य कमी को दूर किया और भारत को गेहूं और चावल जैसी प्रमुख फसलों में आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर किया। हालाँकि, हरित क्रांति खाद्य सुरक्षा को संबोधित करने में महत्वपूर्ण थी, लेकिन इसने महत्वपूर्ण पर्यावरणीय परिणाम लाए जो आज भी देश को प्रभावित कर रहे है। सिंचाई के लिए भूजल के अत्यधिक दोहन, विशेष रूप से पंजाब और हरियाणा जैसे क्षेत्रों में, जलभृतों में गंभीर कमी आई, जबकि मोनो-क्रॉपिंग प्रणाली ने पारंपरिक कृषि प्रथाओं को बाधित किया और लंबे समय तक मिट्टी के पोषक तत्वों को नुकसान पहुँचाया। अत्यधिक कीटनाशकों के उपयोग के परिणामस्वरूप लाभकारी कीटों की आबादी में गिरावट आई, जिससे पारिस्थितिक असंतुलन और मनुष्यों के लिए स्वास्थ्य जोखिम पैदा हुए।

इसके अलावा, सिंचित कृषि पर हरित क्रांति के फोकस ने वर्षा आधारित क्षेत्रों की उपेक्षा की, जिससे क्षेत्रीय असमानताएँ बढ़ीं और जल संसाधन की चुनौतियाँ बढ़ीं। मिट्टी की उर्वरता में कमी, जल प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन सहित पर्यावरणीय नुकसान ने इस अवधि के दौरान शुरू की गई कृषि पद्धतियों की स्थिरता के बारे में चिंताएँ बढ़ा दी हैं।इस सार का उद्देश्य भारत में हरित क्रांति की दोहरी प्रकृति का पता लगाना है, जिसमें इसकी कृषि उपलब्धियों और इसके द्वारा उत्पन्न महत्वपूर्ण पर्यावरणीय चुनौतियों दोनों पर प्रकाश डाला गया है। चर्चा पर्यावरणीय स्वास्थ्य से समझौता किए बिना

दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए टिकाऊ कृषि पद्धतियों की ओर संक्रमण के महत्व को रेखांकित करती है।

मुख्य शब्द-*हरित क्रांति , कृषि, ग्रीनहाउस गैस, पर्यावरणीय, भारत*

परिचय:

भारत के इतिहास में सबसे उल्लेखनीय उपलब्धि यह रही है कि उसने खुद को एक खाद्यान्न की कमी वाले देश से खाद्यान्न अधिशेष वाले देश में बदलने और इस क्षेत्र को मजबूत बनाने में सफलता प्राप्त की है, जो भारत के अस्तित्व के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। कोई अन्य गतिविधि लोगों के सामाजिक-आर्थिक विकास पर हरित क्रांति के समान व्यापक प्रभाव नहीं डालती है। इसने भारतीय कृषि के सभी क्षेत्रों में एक गतिशील विकास की शुरुआत की। 1.4 अरब लोगों को खिलाने की चुनौती को देश ने हरित क्रांति की प्रभावशाली सफलता के कारण आसानी से पार कर लिया।

हालांकि, हरित क्रांति की सफलता अत्यधिक महत्वपूर्ण है और भूख और गरीबी से निपटने में इसका योगदान सराहनीय है, लेकिन हरित क्रांति का दूसरा पहलू देश के इस सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र के हितधारकों के बीच चिंताएँ पैदा कर रहा है। हरित क्रांति अब थकावट के संकेत दिखा रही है और मिट्टी की उत्पादकता खतरनाक दर से घट रही है। कीटनाशकों का अंधाधुंध और बार-बार इस्तेमाल जैव विविधता के नुकसान, कीट-प्रतिरोध और अन्य पारिस्थितिक असंतुलन की ओर ले जा रहा है।[1] इस लेख में यह विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है कि गहन कृषि पद्धतियों के कारण पर्यावरण का क्षरण कैसे हो रहा है और यह पशुधन के स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित कर रहा है।

"हरित क्रांति" शब्द का पहली बार 1960 के दशक में विलियम गौड ने उपयोग किया था, जो उस समय अमेरिकी अंतर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी के निदेशक थे। यह शब्द उच्च उपज वाले अनाज की किस्मों, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग और उन्नत प्रबंधन तकनीकों के माध्यम से कृषि उत्पादकता में एक महत्वपूर्ण वृद्धि का प्रतीक था। हरित क्रांति वैज्ञानिक, तकनीकी और भू-राजनीतिक परिस्थितियों के संयोजन से उत्पन्न हुई। 1960 के दशक में डॉ. नॉर्मन बोरलॉग द्वारा नई और भिन्न प्रकार की फसलों के बीजों का विकास खाद्य उत्पादन में एक महत्वपूर्ण

[1] कुमार, सचिन, शर्मा, अनिल के., रावत, एस.एस., जैन, डी.के. और एस. घोष (2013)। कृषि और पशुधन जानवरों में कीटनाशकों का उपयोग और भारत के पर्यावरण पर इसका प्रभाव। एशियन जे. एनवायर्न. साइंस, 8(1): 51-57।

प्रगति थी, जिसने हरित क्रांति को बढ़ावा दिया। 1943 में रॉकफेलर फाउंडेशन द्वारा स्थापित मैक्सिकन कृषि कार्यक्रम ने हरित क्रांति की प्रक्रिया की शुरुआत की, जिसमें अमेरिकी और मैक्सिकन वैज्ञानिकों ने मिलकर उच्च उपज देने वाले सिंथेटिक और संकर मकई और गेहूं की किस्में विकसित कीं, जो स्थानीय किस्मों की तुलना में अधिक उपजाऊ थीं।[2] मैक्सिको में हरित क्रांति की सफलता के कारण 1950 और 1960 के दशकों में इसकी प्रौद्योगिकियां विश्व स्तर पर फैल गईं।[3] 1961 में, अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान ने फिलीपींस में फोर्ड और रॉकफेलर फाउंडेशन की सहायता से उच्च उपज देने वाली संकर चावल किस्मों को विकसित करने का काम शुरू किया।

1960 के दशक में शुरू की गई हरित क्रांति, भारत सहित विकासशील देशों में खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कृषि सुधारों की एक श्रृंखला थी। HYV बीजों की शुरूआत, रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का गहन उपयोग, और विस्तारित सिंचाई प्रणालियों ने अकाल को टालने और खाद्य सुरक्षा को संबोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालाँकि, हरित क्रांति ने कई पर्यावरणीय मुद्दे भी लाए जो समय के साथ बने रहे और बढ़ते गए। यह शोधपत्र भारत में हरित क्रांति के पर्यावरणीय परिणामों की खोज करता है, इसकी दीर्घकालिक स्थिरता का मूल्यांकन करता है।'हरित क्रांति का मतलब है कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल। हरित क्रांति का श्रेय नॉर्मन बोरलॉग को दिया जाता है, जिन्होंने 1960 के दशक में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए कई अध्ययन किए थे। नॉर्मन के शोध में दो पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया गया; कृषि उत्पादन बढ़ाना और खाद्य गुणवत्ता को बढ़ाना।

कृषि उत्पादन मनुष्यों और विभिन्न अन्य जानवरों के लिए भोजन का प्राथमिक स्रोत है। यह मानव जीवन को बनाए रखने के लिए आवश्यक फसलों, पशुधन और अन्य खाद्य उत्पादों की एक विविध

[2] कुमार, सचिन, शर्मा, अनिल के., रावत, एस.एस., जैन, डी.के. और एस. घोष (2013)। कृषि और पशुधन जानवरों में कीटनाशकों का उपयोग और भारत के पर्यावरण पर इसका प्रभाव। एशियन जे. एनवायर्न. साइंस, 8(1): 51-57।

[3] ब्रिनी, ए. (2010)। हरित क्रांति: हरित क्रांति का इतिहास और अवलोकन। भूगोल, www.About.com

श्रेणी प्रदान करता है। खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और भूख को रोकने के लिए एक विश्वसनीय और पर्याप्त कृषि क्षेत्र आवश्यक है।

भारत में, एम.एस. स्वामीनाथन को हरित क्रांति का जनक माना जाता है। उनके वैज्ञानिक तरीकों और अध्ययनों ने भारत को अपने कृषि उत्पादन को बढ़ाने और एक टिकाऊ देश बनने में मदद की। स्वामीनाथन के प्रयासों ने भारत की आर्थिक वृद्धि में भी योगदान दिया। भारत में, 50% से अधिक आबादी कृषि या संबंधित व्यवसायों में कार्यरत है। ये लोग एमएस स्वामीनाथन द्वारा शुरू की गई आधुनिक तकनीकों के साथ अपनी पूरी क्षमता के साथ प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने में सक्षम थे।[4]

आज, भारत दूध, दालों और जूट का सबसे बड़ा उत्पादक है। इतना ही नहीं, भारत चावल, गेहूं, गन्ना, मूंगफली, सब्जियां, फल और कपास का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। हरित क्रांति भारत और दुनिया के इतिहास में एक परिवर्तनकारी चरण था, जहां कृषि उत्पादन पूरी आबादी को बनाए रखने में सक्षम था

मुख्य उद्देश्य:

- भारत के कृषि उत्पादन पर हरित क्रांति के सकारात्मक परिणामों की जाँच करना।
- हरित क्रांति प्रौद्योगिकियों के परिणामस्वरूप उभरी पर्यावरणीय चुनौतियों की पहचान करना।
- पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देने के लिए संभावित रणनीतियों का पता लगाना।

1. भारत में हरित क्रांति की उत्पत्ति:

भारत में हरित क्रांति का नेतृत्व 1960 के दशक के दौरान खाद्य कमी और खाद्य आयात पर निर्भरता को दूर करने की आवश्यकता द्वारा किया गया था। अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों और सरकार द्वारा समर्थित, क्रांति ने मुख्य रूप से गेहूं और चावल के लिए HYV बीजों को पेश करने पर ध्यान केंद्रित किया, जिसका उगने का मौसम छोटा था और उपज अधिक थी। पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य इन तकनीकी प्रगति के प्राथमिक लाभार्थी के रूप में उभरे, जिससे खाद्यान्न उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई।

[4] ब्रिनी, ए. (2010)। हरित क्रांति: हरित क्रांति का इतिहास और अवलोकन। भूगोल, www.About.com

भारतीय कृषि और हरित क्रांति: कृषि ग्रामीण भारत की मुख्य आधार है क्योंकि लगभग 70 प्रतिशत आबादी इस गतिविधि में संलग्न है। कृषि और इसके संबंधित क्षेत्र सकल घरेलू उत्पाद में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं, हालांकि यह वर्षों से घटता जा रहा है। स्वतंत्रता-पूर्व भारत ने कई अकाल देखे, जिन्होंने भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ को तोड़ दिया था। सबसे गंभीर अकाल 1943 में बंगाल का अकाल था, जिसमें तीन मिलियन लोग मारे गए थे, जो नाजी होलोकॉस्ट के बराबर है। 1947-60 के दौरान खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए 'अधिक भोजन उगाओ' अभियान, गहन कृषि विकास कार्यक्रम और गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम शुरू किए गए थे। ये कार्यक्रम खाद्यान्न की आवश्यक मांग को पूरा नहीं कर सके और देश अमेरिका जैसे देशों से लाखों टन खाद्यान्न आयात कर रहा था। 1960 के दशक की शुरुआत में, भारत खाद्य संकट का सामना कर रहा था और कृषि के पतन के कगार पर था। अकाल जैसी स्थिति को रोकने के लिए तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता थी। कृषि क्षेत्र में विफलताओं के कारण खाद्य उत्पादन संकट के दौरान भारतीय सरकार का 'हरित क्रांति' को अपनाने का निर्णय एक आपातकालीन प्रतिक्रिया थी।[5] भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पहले महानिदेशक बेंजामिन पीरी पाल ने 1950 के दशक के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई), नई दिल्ली में गेहूं सुधार कार्यक्रम शुरू किया और एनपी 809 और एनपी 824 जैसी गेहूं की किस्मों का विकास किया, लेकिन वास्तविक प्रगति मार्च 1961 में हुई, जब नॉर्मन ई. बोरलॉग द्वारा मैक्सिको में विकसित नोरीन-10 बौने जीन वाली कुछ बौनी बसंत गेहूं की किस्मों को आईएआरआई के खेतों में उगाया गया ।[6]

1965 में, भारत सरकार के तत्कालीन कृषि मंत्री सी. सुब्रमण्यम ने कृषि अनुसंधान प्रणाली में बड़े पुनर्गठन कदम उठाए और खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए जोरदार अभियान शुरू किया। 1966 में, मेक्सिको की अर्ध-बौनी किस्मों, लेर्मा रोजो 64ए और सोनोरा 64 के 18,000 टन बीज को बीज प्रसार के लिए आयात किया गया । इस प्रकार भारत में 'हरित क्रांति' की कहानी आरंभ हुई। भारतीय वैज्ञानिकों, जिनमें भारतीय हरित क्रांति के जनक एम. एस. स्वामीनाथन भी शामिल थे, ने मेक्सिको से प्राप्त उन्नत पीढ़ी की सामग्री से नई किस्में जैसे कल्याण सोना और सोनालिका विकसित कीं। मेक्सिकन किस्मों और भारतीय किस्मों के बीच संकरण ने देश के विभिन्न हिस्सों में कई उच्च उपज देने वाले किस्मों का उत्पादन किया। [7]कृषि वैज्ञानिकों द्वारा उच्च उपज वाली किस्मों (एचवाईवी)

[5] सीईडी (2007)। भारत में हरित क्रांति का भूरे रंग में परिवर्तन: रासायनिक प्रौद्योगिकी का प्रभाव। शिक्षा और दस्तावेज़ीकरण केंद्र, मुंबई, भारत। www.doccentre.net

[6] Anonymous (2001). Agriculture. Pursuit and Promotion of Science—The Indian Experience. Indian National Science Academy, New Delhi.

[7] वही |.

को पहचानने की असाधारण गति ने पिछले 40 वर्षों में गेहूं उत्पादन में बढ़ती प्रवृत्ति को जन्म दिया। भारतीय गेहूं की किस्में सोनालिका, डब्लूएल 711, एचडी 2009 और एचडी 2172 बांग्लादेश, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, अफगानिस्तान, सूडान और सीरिया जैसे देशों में भी लोकप्रिय हैं। सूडान में, गेहूं की किस्म एचडी 2172, जो 90 प्रतिशत गेहूं क्षेत्र में उगाई जाती है, ने खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता का मार्ग प्रशस्त किया है (अनाम, 2001)। खाद्यान्न उत्पादन 1950 में 50.80 मिलियन टन से बढ़कर 2013-14 (अनुमानित) में लगभग 264.3 मिलियन टन हो गया है।

2. हरित क्रांति के सकारात्मक प्रभाव:

हरित क्रांति ने भारत में खाद्य उत्पादन को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया, जिससे देश खाद्यान्न की कमी से आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ा। 1965 से 1970 के बीच, विशेष रूप से गेहूं के उत्पादन में लगभग 70% की वृद्धि हुई, जिसने भारत को गेहूं और चावल के दुनिया के सबसे बड़े उत्पादकों में से एक बना दिया। इस उल्लेखनीय वृद्धि ने देश को अपनी विशाल आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में मदद की और खाद्यान्न आयात पर निर्भरता को कम किया। पहले जहां अकाल जैसी स्थितियाँ देश के लिए चुनौती बनती थीं, वहीं हरित क्रांति के बाद भारत अपनी खाद्य जरूरतों को पूरा करने के साथ-साथ कुछ फसलों का निर्यात भी करने में सक्षम हुआ।[8]

हरित क्रांति ने भारतीय अर्थव्यवस्था को भी स्थिर और मजबूत किया। प्रमुख कृषि क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ने से किसानों की आय में भी महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। इससे न केवल कृषि आधारित आय में इजाफा हुआ, बल्कि ग्रामीण विकास को भी बढ़ावा मिला। ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे का विकास, जैसे सिंचाई सुविधाओं का विस्तार और सड़कों का निर्माण, तेज हुआ। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को स्थिरता मिली और ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी में कमी आई। इसके अलावा, खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि से खाद्य मूल्य स्थिर रहे, जिससे आम जनता को भी लाभ हुआ।

तकनीकी दृष्टिकोण से, हरित क्रांति ने भारत में कृषि पद्धतियों में बड़े पैमाने पर परिवर्तन लाए। उच्च उपज वाली बीजों (HYV), रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, और सिंचाई तकनीकों के व्यापक उपयोग ने पारंपरिक कृषि को बदल दिया। साथ ही, मशीनीकरण के बढ़ते उपयोग से कृषि श्रम में भी बदलाव आया। ट्रैक्टर, थ्रेशर और अन्य कृषि मशीनों के उपयोग ने फसल उत्पादन को अधिक कुशल और उत्पादक बना दिया। इस तकनीकी प्रगति के कारण, भारत में कृषि क्षेत्र ने तेजी से औद्योगिक विकास का रास्ता अपनाया और पारंपरिक कृषि पद्धतियों की तुलना में अधिक वैज्ञानिक और व्यावसायिक दृष्टिकोण से कृषि प्रबंधन शुरू हुआ।

[8] सीईडी (2007)। भारत में हरित क्रांति का भूरे रंग में परिवर्तन: रासायनिक प्रौद्योगिकी का प्रभाव। शिक्षा और दस्तावेज़ीकरण केंद्र, मुंबई, भारत। www.doccentre.net

3. हरित क्रांति के पर्यावरणीय परिणाम: हरित क्रांति की सफलता के बावजूद इसके पर्यावरणीय परिणामों ने कई गंभीर चिंताएँ उत्पन्न की हैं। रासायनिक इनपुट और गहन कृषि पद्धतियों के व्यापक उपयोग ने पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों, जैसे यूरिया, फॉस्फेट और नाइट्रेट पर निर्भरता के कारण समय के साथ मिट्टी की उर्वरता घटती गई, जबकि गेहूं और चावल की निरंतर एकल-फसल प्रणाली ने मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को बढ़ा दिया। इसके अलावा, हरित क्रांति की सफलता काफी हद तक सिंचाई पर निर्भर थी, जिससे पंजाब और हरियाणा जैसे क्षेत्रों में ट्यूबवेल के माध्यम से अत्यधिक जल उपयोग के कारण भूजल स्तर में चिंताजनक गिरावट दर्ज की गई।[9] हाल के अनुमानों के अनुसार, पंजाब के कुछ क्षेत्रों में भूजल स्तर प्रति वर्ष 1 मीटर से अधिक गिर रहा है।[10] साथ ही, नाइट्रोजन उर्वरकों और कीटनाशकों का बढ़ता उपयोग पारिस्थितिक तंत्र को गंभीर रूप से प्रभावित कर रहा है। इसके अतिरिक्त, कृषि प्रथाओं से मिलने वाले आर्थिक लाभ घटने से किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। उत्पादन बढ़ाने के प्रयास में किसानों को अपनी भूमि का अत्यधिक उपयोग करने के लिए मजबूर होना पड़ा है, जिससे खेती की तीव्रता और लागत बढ़ गई है। आर्थिक (जैसे, उच्च लागत वाले इनपुट - बीज, उर्वरक, कीटनाशक, कृषि श्रम - और न्यूनतम समर्थन मूल्य की कमी) और पारिस्थितिक (मिट्टी की कम उत्पादकता, घटता जल स्तर आदि) कारणों के कारण घटती फसल पैदावार और आय ने छोटे और सीमांत किसानों को कर्ज के चक्र में धकेल दिया है।

जल प्रदूषण: रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के बढ़ते उपयोग से जल संसाधनों का प्रदूषण गंभीर पर्यावरणीय समस्या बन गया है। खेती के दौरान उपयोग किए गए रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक बारिश के पानी के साथ बहकर नदियों, तालाबों और झीलों में पहुंच जाते हैं। इन रसायनों के कारण सतही और भूजल, दोनों प्रकार के जल स्रोतों में प्रदूषण बढ़ता है। नाइट्रेट, फॉस्फेट और अन्य जहरीले रसायन जल में मिलकर जलीय पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करते हैं, जिससे पानी के जीवों की मृत्यु दर में वृद्धि होती है। यह प्रदूषित पानी इंसानों के लिए भी

[9] सिंह, ए.के., सर, टी.के. और टी.के. मंडल (2013)। पश्चिम बंगाल के नदिया जिले में बोवाइन दूध में कीटनाशक अवशेषों की निगरानी। पर्यावरण संदूषण और विष विज्ञान बुलेटिन, 91(1): 13-17।

[10] शर्मा, डी. (2008)। उद्घाटन भाषण, पंजाब में पर्यावरणीय मानव स्वास्थ्य संकट पर दो दिवसीय संवाद, जिसे खेत विरासत मिशन के पर्यावरणीय स्वास्थ्य कार्य समूह द्वारा मोहन दाई ओसवाल कैंसर अस्पताल, लुधियाना, पंजाब, भारत में आयोजित किया गया। 23 सितंबर, 2010 को प्राप्त। www.expressindia.com

खतरनाक साबित हो सकता है, खासकर जब पीने के पानी में उच्च स्तर के रसायन पाए जाते हैं, जिससे कई स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं, जैसे कैंसर, जन्म दोष और अन्य गंभीर बीमारियां।[11]

जैव विविधता का नुकसान: हरित क्रांति के दौरान गेहूं और चावल जैसी कुछ उच्च उपज देने वाली किस्मों (HYV) की खेती पर अत्यधिक ध्यान दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि पारंपरिक और स्थानीय फसल किस्में धीरे-धीरे कम होने लगीं, जिससे आनुवंशिक विविधता में कमी आई। फसल की किस्मों की विविधता में यह कमी कीटों, बीमारियों और बदलती जलवायु परिस्थितियों के प्रति पौधों की संवेदनशीलता को बढ़ा देती है। उदाहरण के लिए, किसी विशेष रोग या जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील एकल किस्म की फसल को अगर व्यापक रूप से उगाया जाता है, तो यह फसलों की पूरी पैदावार को खतरे में डाल सकता है, जिससे खाद्य सुरक्षा पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।[12]

कीटनाशक विषाक्तता: हरित क्रांति के परिणामस्वरूप रासायनिक कीटनाशकों का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल हुआ, जिसके कई नकारात्मक प्रभाव देखने को मिले। सबसे पहले, यह गैर-लक्षित प्रजातियों को प्रभावित करता है, जिनमें कई लाभकारी कीट जैसे मधुमक्खियाँ और तितलियाँ भी शामिल हैं जो परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसके अलावा, रासायनिक कीटनाशकों के अंधाधुंध उपयोग के कारण कीटों में कीटनाशक प्रतिरोधकता विकसित हो जाती है, जिससे पहले से अधिक शक्तिशाली और हानिकारक रसायनों के उपयोग की आवश्यकता होती है। यह चक्र अंततः खेती की लागत को बढ़ाता है और पर्यावरणीय विषाक्तता को भी गंभीर रूप से बढ़ाता है।[13]

ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन: गहन कृषि पद्धतियाँ, खासकर सिंथेटिक उर्वरकों के भारी उपयोग, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। उर्वरकों में मौजूद नाइट्रोजन का एक हिस्सा नाइट्रस ऑक्साइड के रूप में वायुमंडल में निकलता है, जो एक शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस है और जलवायु परिवर्तन को बढ़ावा देता है। नाइट्रस ऑक्साइड की हीट-ट्रैपिंग क्षमता कार्बन डाइऑक्साइड की तुलना में 300 गुना अधिक होती है, जिससे यह एक गंभीर पर्यावरणीय चुनौती बन जाती है। इसके अतिरिक्त, खेतों की जुताई, फसलों की कटाई और कृषि

[11]सिंह, ए.के., सर, टी.के. और टी.के. मंडल (2013)। पश्चिम बंगाल के नदिया जिले में बोवाइन दूध में कीटनाशक अवशेषों की निगरानी। पर्यावरण संदूषण और विष विज्ञान बुलेटिन, 91(1): 13-17।

[12] संधू, टी.एस. (1980)। खाद्य पदार्थों में कीटनाशक अवशेष। इंडियन डेयरीमैन, 32: 61-63।

[13] वाधवानी, ए.एम. और आई.जे. लल्ल (1972)। कीटनाशकों के हानिकारक प्रभाव। आईसीएआर की विशेष समिति की रिपोर्ट। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली।

मशीनीकरण में गैर-नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग से भी कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि होती है, जो जलवायु परिवर्तन की समस्या को और भी जटिल बनाता है।[14]

4. क्षेत्रीय असमानताएँ और सामाजिक-आर्थिक निहितार्थ:

जबकि हरित क्रांति ने पंजाब और हरियाणा जैसे क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता पर महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव डाला, यह पूर्वी और दक्षिणी भारत के कुछ हिस्सों जैसे वर्षा आधारित और कम सिंचित क्षेत्रों को लाभ पहुँचाने में विफल रही। इससे कृषि विकास और आय में क्षेत्रीय असमानताएँ पैदा हुईं, जिससे सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ और बढ़ गईं। इसके अतिरिक्त, सीमित संसाधनों वाले छोटे किसान अक्सर नई तकनीकों का खर्च नहीं उठा पाते, जिससे वे हाशिए पर चले जाते हैं।

5. टिकाऊ कृषि विकल्प:

जैविक खेती: रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग के कारण मिट्टी की उर्वरता में कमी और जल प्रदूषण जैसी समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। ऐसे में जैविक खेती एक टिकाऊ विकल्प के रूप में उभर रही है, जिसमें रासायनिक इनपुट का उपयोग न के बराबर होता है और जैविक खाद, कम्पोस्ट, और प्राकृतिक कीट नियंत्रण तरीकों का उपयोग किया जाता है। जैविक खेती से मिट्टी के प्राकृतिक पोषक तत्वों को बनाए रखने में मदद मिलती है, जिससे भूमि की दीर्घकालिक उत्पादकता बढ़ती है। इसके अतिरिक्त, जैविक खेती पारंपरिक फसल किस्मों के संरक्षण और जैव विविधता को बढ़ावा देने में भी सहायक होती है, जो पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक है।[15]

जल-बचत प्रौद्योगिकियाँ: हरित क्रांति के दौरान अत्यधिक सिंचाई के कारण भूजल स्तर में गिरावट एक बड़ी समस्या बन गई है। जल-संरक्षण के लिए ड्रिप सिंचाई और स्प्रिंकलर जैसी कुशल सिंचाई विधियों को अपनाया जा सकता है, जो पौधों की जड़ों में सीधा पानी पहुँचाकर जल की बर्बादी को कम करती हैं। इसके अलावा, वर्षा जल संचयन की विधियाँ अपनाकर, बारिश के पानी को संरक्षित किया जा सकता है और इसका उपयोग सिंचाई और

[14] ब्रिनी, ए. (2010)। हरित क्रांति: हरित क्रांति का इतिहास और अवलोकन। भूगोल, www.About.com

[15] शिवा, व. (1991)। हरित क्रांति की हिंसा–तीसरी दुनिया की कृषि, पारिस्थितिकी और राजनीति। ज़ेड बुक्स, यूएसए। आईएसबीएन: 0862329655।

अन्य कृषि उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। यह न केवल जल संसाधनों के अधिकतम उपयोग को सुनिश्चित करेगा, बल्कि भूजल की कमी को भी कम करेगा।[16]

फसल विविधीकरण: फसल विविधीकरण का उद्देश्य एक ही प्रकार की फसल पर निर्भरता को कम करना है। इसके तहत विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाया जाता है, जिससे मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखने और कीटों और रोगों के जोखिम को कम करने में मदद मिलती है। पारंपरिक फसल किस्मों की ओर वापसी करने से फसलों की आनुवंशिक विविधता बढ़ती है, जिससे वे बदलती जलवायु परिस्थितियों और पर्यावरणीय चुनौतियों के प्रति अधिक लचीली बन जाती हैं। इसके साथ ही, फसल विविधीकरण खाद्य सुरक्षा को भी बढ़ाता है, क्योंकि किसानों को एक ही फसल की असफलता से होने वाले आर्थिक जोखिम का सामना नहीं करना पड़ता।

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम): पारंपरिक कृषि में कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग हानिकारक कीटों के साथ-साथ फायदेमंद जीवों को भी नुकसान पहुंचाता है और पर्यावरणीय असंतुलन पैदा करता है। एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) के तहत रासायनिक कीटनाशकों के बजाय जैविक, यांत्रिक और सांस्कृतिक नियंत्रण तरीकों का उपयोग किया जाता है। इसमें प्राकृतिक शत्रुओं, जैविक कीटनाशक, फेरोमोन ट्रैप और अन्य टिकाऊ विधियों का उपयोग शामिल है। यह कीटनाशक प्रतिरोध की समस्या को कम करने, फसल की पैदावार में सुधार करने और पर्यावरणीय सुरक्षा को बढ़ावा देने में मदद करता है।[17]

कृषि वानिकी: कृषि वानिकी का तात्पर्य कृषि परिदृश्य में पेड़ों और झाड़ियों को एकीकृत करने से है। पेड़ों के साथ खेती करने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है, क्योंकि ये पेड़ मिट्टी में जैविक पदार्थों को जोड़ते हैं और नाइट्रोजन स्थिरीकरण में मदद करते हैं। इसके अलावा, पेड़ जैव विविधता को भी प्रोत्साहित करते हैं और वन्यजीवों के लिए आश्रय और भोजन प्रदान करते हैं। कृषि वानिकी से किसानों को अतिरिक्त आय के स्रोत भी मिलते हैं, जैसे कि लकड़ी, फल, और ईंधन, जिससे उनकी आर्थिक स्थिरता में सुधार होता है।[18]

---

[16] बंसल, ओ.पी. और आर. गुप्ता (2000)। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले का भूजल गुणवत्ता। पेस्टीसाइड रिसर्च जर्नल, 12(2): 188-194।

[17] दिक्षित, टी.एस.एस., कुमार, एस.एन., रायजादा, आर.बी. और एम.के. श्रीवास्तव (1989)। मवेशी चारे में ऑर्गेनोक्लोरिन कीटनाशक अवशेष। बुल. एन्वायर्न. कॉन्टैम. टॉक्सिकोल., 43: 691-696।

[18] देओसी, एच.एस., वाधवन, वी.एम. और एच.एस. संधा (2008)। डेयरी पशुओं में प्रजनन क्षमता पर नाइट्रेट और फ्लोराइड विषाक्तता का प्रभाव। एसटीओएक्स-2008 का सारांश, विष विज्ञान सोसायटी (एसटीओएक्स), भारत का 28वां वार्षिक सम्मेलन और "पर्यावरण और खाद्य प्रदूषकों के वैश्विक संसाधनों की निगरानी और माप: प्रकृति बनाम रसायन" पर

नीतिगत सिफारिशें:

रासायनिक इनपुट का विनियमन: सरकार को रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग पर सख्त नियम लागू करने चाहिए, जैविक विकल्पों के उपयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए।भूजल प्रबंधन: भूजल पुनर्भरण और समुदाय-आधारित जल प्रबंधन कार्यक्रमों सहित स्थायी जल उपयोग पर लक्षित नीतियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

छोटे किसानों के लिए सहायता: छोटे और सीमांत किसानों के लिए वित्तीय और तकनीकी सहायता बढ़ाई जानी चाहिए ताकि टिकाऊ प्रौद्योगिकियों और प्रथाओं तक समान पहुँच सुनिश्चित की जा सके।

निष्कर्ष:

भारत में हरित क्रांति कृषि के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुई। इसके कारण खाद्य उत्पादन में नाटकीय वृद्धि हुई और देश की खाद्य सुरक्षा में सुधार हुआ। हरित क्रांति के दौरान अपनाई गई उच्च उपज देने वाली फसलों (HYV), रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और सिंचाई की आधुनिक तकनीकों ने देश को खाद्यान्न संकट से बाहर निकाला और भारत को खाद्यान्न की कमी वाले राष्ट्र से खाद्यान्न में आत्मनिर्भर राष्ट्र में बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके परिणामस्वरूप भारत में किसानों की आय में वृद्धि हुई, ग्रामीण क्षेत्रों का विकास हुआ, और देश की कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूती मिली।

हालाँकि, हरित क्रांति की इस सफलता की भारी पर्यावरणीय लागत भी रही है। गहन कृषि पद्धतियों और रासायनिक इनपुट के अत्यधिक उपयोग ने गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म दिया। मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव, भूजल का अत्यधिक दोहन, और रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के कारण जल प्रदूषण जैसी समस्याओं ने कृषि के दीर्घकालिक टिकाऊपन को खतरे में डाल दिया है। गेहूं और चावल जैसी एकल-फसल खेती के कारण जैव विविधता में कमी आई, जिससे फसलें बदलते जलवायु के प्रति अधिक संवेदनशील हो गईं। इसके अलावा, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में वृद्धि, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को बढ़ाने के साथ-साथ, कृषि के पर्यावरणीय दुष्प्रभावों का हिस्सा रही है। इस स्थिति से निपटने के लिए टिकाऊ कृषि प्रथाओं की दिशा में एक आदर्श बदलाव की आवश्यकता है। टिकाऊ कृषि न केवल पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करती है, बल्कि किसानों की आजीविका को भी सुधारती है। टिकाऊ कृषि के माध्यम से जैविक खेती, जल-बचत प्रौद्योगिकियाँ, फसल विविधीकरण, एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम), और कृषि वानिकी जैसी रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं।

अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, 16-18 अक्टूबर, 2008, फार्माकोलॉजी और विष विज्ञान विभाग द्वारा आयोजित, गुरु अंगद देव पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, लुधियाना - 141004 (भारत)।

इन प्रथाओं का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना, मिट्टी और जल के स्वास्थ्य में सुधार करना, और पर्यावरणीय क्षति को कम करना है।

इस परिवर्तन के लिए नीतिगत समर्थन, जागरूकता अभियानों और किसानों को तकनीकी प्रशिक्षण की भी आवश्यकता होगी। सरकार को टिकाऊ कृषि प्रथाओं को प्रोत्साहित करने के लिए अनुदान, सब्सिडी, और प्रोत्साहनों की नीति बनानी चाहिए। किसानों को दीर्घकालिक लाभ को ध्यान में रखते हुए, आधुनिक तकनीकों और पारंपरिक ज्ञान के संयोजन का सही उपयोग करना होगा। हरित क्रांति की पारिस्थितिक चुनौतियों का समाधान करने के लिए, भारत को कृषि नीतियों और प्रथाओं में व्यापक सुधार करने की आवश्यकता है। पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं को अपनाकर, देश न केवल खाद्य उत्पादन को बनाए रख सकता है बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए कृषि को टिकाऊ भी बना सकता है। यदि टिकाऊ कृषि की दिशा में ठोस कदम उठाए जाते हैं, तो भारत एक बार फिर कृषि क्षेत्र में एक नई क्रांति ला सकता है, जो न केवल खाद्य सुरक्षा प्रदान करेगी बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता भी सुनिश्चित करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. आनंद, जी. (2010). भारत में हरित क्रांति के साथ सब्सिडी का उल्टा असर। वॉल स्ट्रीट जर्नल, सोमवार, 22 फरवरी, 2010।
2. बंसल, ओ.पी. और आर. गुप्ता (2000)। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले का भूजल गुणवत्ता। पेस्टीसाइड रिसर्च जर्नल, 12(2): 188-194।
3. ब्रिनी, ए. (2010)। हरित क्रांति: हरित क्रांति का इतिहास और अवलोकन। भूगोल, www.About.com
4. सीईडी (2007)। भारत में हरित क्रांति का भूरे रंग में परिवर्तन: रासायनिक प्रौद्योगिकी का प्रभाव। शिक्षा और दस्तावेज़ीकरण केंद्र, मुंबई, भारत। www.doccentre.net
5. चौहान, आर.एस. (2009)। खाद्य श्रृंखला में कीटनाशकों से सावधान। आयोजक, 16 अगस्त, 2009।
6. कॉनवे, जी. (1997)। द डबल्ली ग्रीन रिवॉल्यूशन: 21वीं सदी में सभी के लिए भोजन। पेंगुइन बुक्स, लंदन।
7. डेका, एस.सी., बर्मन, एन. और ए.ए.एल.एच. बरुआ (2004)। असम में चारा, चारे और मक्खन में कीटनाशक अवशेषों की निगरानी। पेस्टीसाइड रिसर्च जर्नल, 16(1): 86-89।
8. देओसी, एच.एस., वाधवन, वी.एम. और एच.एस. संधा (2008)। डेयरी पशुओं में प्रजनन क्षमता पर नाइट्रेट और फ्लोराइड विषाक्तता का प्रभाव। एसटीओएक्स-2008 का सारांश, विष विज्ञान सोसायटी (एसटीओएक्स), भारत का 28वां वार्षिक सम्मेलन और "पर्यावरण और खाद्य प्रदूषकों

के वैश्विक संसाधनों की निगरानी और माप: प्रकृति बनाम रसायन" पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, 16-18 अक्टूबर, 2008, फार्माकोलॉजी और विष विज्ञान विभाग द्वारा आयोजित, गुरु अंगद देव पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, लुधियाना - 141004 (भारत)।

9. दिक्षित, टी.एस.एस., कुमार, एस.एन., रायजादा, आर.बी. और एम.के. श्रीवास्तव (1989)। मवेशी चारे में ऑर्गेनोक्लोरिन कीटनाशक अवशेष। बुल. एन्वायर्न. कॉन्टैम. टॉक्सिकोल., 43: 691-696।
10. दिक्षित, टी.एस.एस., रायजादा, आर.बी., कुमार, एस.एन., श्रीवास्तव, एम.के., कुलश्रेष्ठ, एस.के. और यू.एन. अदोलिया (1990)। भोपाल, भारत में पेयजल के मुख्य स्रोतों में डीडीटी और एचसीएच के अवशेष। बुल. एन्वायर्न. कॉन्टैम. टॉक्सिकोल., 45: 389-393।
11. दुआ, के. (2003)। पंजाब (भारत) में गाय और भैंस में रोग संवेदनशीलता की तुलना। 10वें अंतर्राष्ट्रीय पशु चिकित्सा महामारी विज्ञान और अर्थशास्त्र संगोष्ठी के कार्यवृत्त, 2003। www.sciquest.org.nz पर उपलब्ध।
12. गर्ग, बी. (2010)। यूरेनियम, धातुएं पंजाब को विषाक्त हॉटस्पॉट बनाती हैं। द टाइम्स ऑफ इंडिया, 15 जून, 2010। http://timesofindia.indiatimes.com/india/Uranium-metals-make-Punjab-toxic-hotspot/articleshow/6048431.cms
13. गुप्ता, एम.पी., कुमार, एच., महाजन, वी., कौर, के., मित्तल, डी., फिलिया, जी., वर्मा, ए.एस., पाटिल, पी.के. और पी.के. सिद्धू (2008)। पंजाब में पाई जाने वाली विषाक्तताओं की महामारी विज्ञान जांच, उसका उपचार और नियंत्रण। एसटीओएक्स-2008 का सारांश, विष विज्ञान सोसायटी (एसटीओएक्स), भारत का 28वां वार्षिक सम्मेलन और "पर्यावरण और खाद्य प्रदूषकों के वैश्विक संसाधनों की निगरानी और माप: प्रकृति बनाम रसायन" पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, 16-18 अक्टूबर, 2008, फार्माकोलॉजी और विष विज्ञान विभाग द्वारा आयोजित, गुरु अंगद देव पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, लुधियाना - 141004 (भारत)।
14. गुप्ता, आर.सी., क्वात्रा, एम.एस. और एन. सिंह (1982)। डेयरी पशुओं में विषाक्तता। भारतीय पशु चिकित्सा जर्नल, 59: 738-740।
15. आईसीएमआर बुलेटिन (1993)। भारत में खाद्य प्रदूषण की निगरानी। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली।
16. इमरान खान, एम., बर्मन, के. और पी.पी. अत्रेजा (2003)। खाद्य श्रृंखला में कीटनाशक अवशेष: खतरें और समाधान। इंडियन डेयरीमैन, 55: 61-66।
17. कंग, बी.के., सिंह, बी., चाहल, के.के. और आर.एस. बट्टू (2002)। पेस्टीसाइड अवशेषों के साथ चारे और हरे चारे का संदूषण। पेस्टीसाइड रिसर्च जर्नल, 4(2): 308-312।

18. कश्यप, एस.के. और एस.के. गुप्ता (1973)। भारत में कीटनाशक विष विज्ञान की समीक्षा। संगोष्ठी के कार्यवृत्त में, "कीटनाशक अवशेष विश्लेषण में प्रगति और समस्याएं"। लुधियाना, 18-19 नवम्बर, 1973।
19. कौशल, आर., गिल, जे.पी.एस., शर्मा, जे.के. और आर.एस. बट्टू (2008)। पंजाब में चिकन उत्पादों में क्लोरीनयुक्त कीटनाशक अवशेष। एसटीओएक्स-2008 का सारांश, विष विज्ञान सोसायटी (एसटीओएक्स), भारत का 28वां वार्षिक सम्मेलन और "पर्यावरण और खाद्य प्रदूषकों के वैश्विक संसाधनों की निगरानी और माप: प्रकृति बनाम रसायन" पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, 16-18 अक्टूबर, 2008, फार्माकोलॉजी और विष विज्ञान विभाग द्वारा आयोजित, गुरु अंगद देव पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, लुधियाना - 141004 (भारत)।
20. कुमार, सचिन, शर्मा, अनिल के., रावत, एस.एस., जैन, डी.के. और एस. घोष (2013)। कृषि और पशुधन जानवरों में कीटनाशकों का उपयोग और भारत के पर्यावरण पर इसका प्रभाव। एशियन जे. एनवायर्न. साइंस, 8(1): 51-57।
21. कुमारी, बी. और टी.एस. कथपाल (1995)। हरियाणा में दूध में एचसीएच और डीडीटी का संदूषण स्तर। इंडियन जे. एनिमल साइंस, 65(5): 576-582।
22. लिपटन, एम. और आर. लोंघर्स्ट (1989)। नए बीज और गरीब लोग। मैकमिलन, लंदन।
23. माथुर, एच.बी., अग्रवाल, एच.सी., जॉनसन, एस. और एन. सैकिया (2005)। पंजाब के गाँवों से रक्त के नमूनों में कीटनाशक अवशेषों का विश्लेषण। विज्ञान और पर्यावरण केंद्र की रिपोर्ट। सीएसई/पीएमएल/पीआर-21/2005।
24. नाग, के.एस., रैकवार, एम.के., महंता, एस.के. और एस.एस. कुंडू (2005)। पशु चारे में कीटनाशक अवशेष। पशु चारा प्रौद्योगिकी (संपादक एस.एस. कुंडू, एस.के. महंता, सुल्तान सिंह, पी.एस. पाठक) में। सतीश सीरियल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
25. रैकवार, एम.के. और एस.के. नाग (2003)। पशु चारे में ऑर्गेनोक्लोरिन कीटनाशक अवशेष। 40वें वार्षिक सम्मेलन के कार्यवृत्त में। इंडियन केमिकल सोसाइटी, (4) 127।
26. रंधावा, एस.एस., अरोड़ा, सी.एल., रंधावा, सी.एस. और बी.पी. जोशी (1994)। XVIII वर्ल्ड बूयाट्रिक्स कांग्रेस, बोलोग्ना, इटली के कार्यवृत्त।
27. रे, पी.के. (1992)। गंगा नदी की गुणवत्ता पर माप–भारी धातुएं और कीटनाशक। प्रोजेक्ट रिपोर्ट, औद्योगिक विष विज्ञान अनुसंधान केंद्र, लखनऊ, भारत।
28. संधू, टी.एस. (1980)। खाद्य पदार्थों में कीटनाशक अवशेष। इंडियन डेयरीमैन, 32: 61-63।
29. शर्मा, डी. (2008)। उद्घाटन भाषण, पंजाब में पर्यावरणीय मानव स्वास्थ्य संकट पर दो दिवसीय संवाद, जिसे खेत विरासत मिशन के पर्यावरणीय स्वास्थ्य कार्य समूह द्वारा मोहन दाई

ओसवाल कैंसर अस्पताल, लुधियाना, पंजाब, भारत में आयोजित किया गया। 23 सितंबर, 2010 को प्राप्त। www.expressindia.com

30. शिवा, व. (1991)। हरित क्रांति की हिंसा–तीसरी दुनिया की कृषि, पारिस्थितिकी और राजनीति। ज़ेड बुक्स, यूएसए। आईएसबीएन: 0862329655।
31. सिंह, ए.के., सर, टी.के. और टी.के. मंडल (2013)। पश्चिम बंगाल के नदिया जिले में बोवाइन दूध में कीटनाशक अवशेषों की निगरानी। पर्यावरण संदूषण और विष विज्ञान बुलेटिन, 91(1): 13-17।
32. तिवाना, एन.एस., जेरथ, एन., लाधर, एस.एस., सिंह, जी., पॉल, आर., दुआ, डी.के. और एच.के. परवाना (2007)। राज्य की पर्यावरण स्थिति; पंजाब-2007। पंजाब राज्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषद।
33. वाधवानी, ए.एम. और आई.जे. लल्ल (1972)। कीटनाशकों के हानिकारक प्रभाव। आईसीएआर की विशेष समिति की रिपोर्ट। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली।